भारतीय संस्कृति और गौरव बोध

डॉ. पोपट भावराव बिरारी

सहायक प्राध्यापक

कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय त्र्यंबकेश्वर, जि. नासिक

ईमेल– popatbirari@gmail.com

मो. 9850391121

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह समाज में रहता है । सामूहिक रूप से ही अपनी समृद्धि एवं विकास हेतु प्रयत्नशील होता है । उसके लिए यह महत्वपूर्ण था, कि वह समूह में रहते हुए अपने साथ ही अन्य व्यक्तियों के साथ क्या संबंध रखें । उसने बुद्धि द्वारा बौद्धिक रूप से विचार किया और धीरे–धीरे उन सामाजिक संस्थाओं का विकास किया; जिसमें उसका हित निहित हो । परिवार, जन, राज्य आदि जिन विविध संस्थाओं का मनुष्य ने विकास किया, वे सब उनके सामाजिक एवं सामूहिक जीवन की ही अभिव्यक्ति करते हैं । मनुष्य ने अपने जीवन को सुखमय बनाने के लिए संगीत, साहित्य और कला का अनुसरण किया तथा उसे भली–भांति विकसित करके अपने जीवन को सुसंकृत बनाने का महत्वपूर्ण प्रयास किया ।

'संस्कृति' इस शब्द के अर्थ को विविध विद्वानों ने प्रतिपादित किया है । आ. रामचंद्र वर्मा के अनुसार "संस्कार करने अर्थात किसी वस्तु को संस्कृत रूप देने की क्रिया या भाव ।"[1] संस्कृति का अर्थ परंपरा से चली आ रही आचार–विचार तथा रहन–सहन आदि की जीवन पद्धति है । सत्यकेतु विद्यालंकार का कथन है कि– "मनुष्य अपनी बुद्धि का प्रयोग कर विचार और कर्म के क्षेत्र में जो सृजन करता है, उसी को संस्कृति कहते हैं ।"[2] अतः मनुष्य ने धर्म का जो विकास किया, दर्शनशास्त्र के रूप में जो चिंतन किया, साहित्य, संगीत और कला का जो सृजन किया, सामूहिक जीवन को हितकर और सुखी बनाने के लिए जिन प्रथा एवं संस्थाओं को विकसित किया है; उन सब का समावेश 'संस्कृति' में होता है । संस्कृति केवल एक व्यक्ति का परिणाम नहीं होती अपितु वह समाज के अनगिनत व्यक्तियों के सामूहिक प्रयत्न का परिणाम है । यह प्रयास मनुष्य की संताने निरंतर करती रहती है । इसी कारणवश संस्कृति का हमेशा विकास होता गया । वह एक युग में न होकर कई युगों के मनुष्य के सामूहिक परिश्रम का परिणाम है । इस पृथ्वी पर कई वर्षों से मनुष्य समूह में रह रहे है । हर समूह की प्राकृतिक एवं भौगोलिक परिस्थितियाँ एक समान नहीं है । ऐसे ही विभिन्न प्रदेशों में निवास करने वाले लोगों के समूहों की संस्कृति का विकास विभिन्न प्रकार से रहा है । भारत की संस्कृति अन्य देशों से अनेक अंशो में भिन्न है और उसकी अनेकानेक विशेषताएँ रही हैं । अतः भारतीय संस्कृति का इतिहास गौरवशाली है ।

किसी भी देश की संस्कृति वहां के धर्म, दार्शनिक विचार, साहित्य एवं कला के रूप में अभिव्यक्त होती है । भारत की संस्कृति ने अपने को जिस रूप में अभिव्यक्त किया उसकी मुख्य विशेषता अध्यात्म भावना रही हैं। इस संसार में कोई ऐसी परम सत्ता है; जो जीवन एवं शक्ति प्राप्त करके यह प्रकृति फल–फूल रही हैं। यह विचार इस देश में सदा से ही चलता आया है । यह विश्वास हम सब में विद्यमान हैं, हम सब उसी परम सत्ता के अंश हैं । बौद्ध को राम और कृष्ण की तरह भगवान का अवतार माना गया है तथा उसकी पूजा होने लगी है । विविध धार्मिक आंदोलनों एवं परंपराओं में आर्य लोग सदा समन्वय स्थापित करते रहे है ।

हिंदू धर्म में अनेक मत संप्रदाय रहे हैं । इनकी मूल शक्ति वही आध्यात्म भावना रही हैं, जो भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता है । इसलिए उनमें विरोध के बावजूद भी समन्वय स्थापित होता रहा । इस्लाम के संपर्क में अन्य प्राचीन धर्म नष्ट हो गए किंतु भारत का धर्म कायम रहा। भारत के विचारको ने तो इस्लाम धर्म के साथ भी अपने धर्म के समन्वय का प्रयत्न किया है । मुसलमानों का सूफी संप्रदाय भारत के अध्यात्मवाद, योग–साधना और रहस्यवाद का मुस्लिम संस्करण है । मुस्लिम पीरों के मकबरे बनाकर उनकी पूजा करना भारतीय संस्कृति की ही देन है । राम एवं रहीम, कृष्ण और करीम के एकता के प्रतिपादन द्वारा इस देश के अनेक संतों ने इस्लाम और हिंदू धर्म में समन्वय का प्रयत्न किया है ।

भारत की प्राचीन संस्कृति की परंपरा अब तक अक्षुण्ण रही है । बर्मा, लंका, तिब्बत आदि के धर्म लुप्त हो गए, उनका स्थान भारत से ही गए बौद्ध धर्म ने ले लिया पर भारत में बौद्ध धर्म हिंदू धर्म में ही विलीन हो गया । "भारतीय संस्कृति की अध्यात्म–प्रधान मूल भावना सबसे अपने को और अपने में सबको देखने की प्रवृत्ति और समन्वय के विचार ही इसमें प्रधान कारण थे ।"[3] विविध संप्रदायों के प्रति सहिष्णुता और सम्मान की भावना भारतीय संस्कृति का प्रधान अंग है । सम्राट अशोक द्वारा भारत के संपूर्ण इतिहास में ओतप्रोत है । इसलिए वहां धार्मिक दृष्टि से राजाओं ने अत्याचार नहीं किए और न ही सांप्रदायिक युद्ध हुए । परंतु जो कुछ सांप्रदायिक संघर्ष के एक दो उदाहरण मिलते हैं, वे अपवादात्मक रहे हैं । भारतीय संस्कृति की मुख्यधारा को वे सूचित नहीं करते ।

भारतीय विचारधारा सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह पर बड़ा जोर देती है । हमारे देश की वैयक्तिक एवं सामाजिक साधना के लिए यह मूल सूत्र रहे हैं । आदर्शों का पालन करना हमारे प्राचीन परिवारजनों ने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयत्न किया, व हमारे समाज एवं देश ने भी उन्हीं की साधना में अपनी शक्ति को लगाया है । इस देश के राजा पराक्रमी रहे हैं तथा उन्होंने सदा आदर्श निर्माण किए हैं । सिर्फ भारत में ही नहीं अपितु उसके बाहर भी अपने साम्राज्य को विस्तृत करने का प्रयास किया है । अध्यात्म के कारण भारत की संस्कृति में ऐसा सौंदर्य आ गया है, जो इस देश की संस्कृति की अनुपम देन है । "इस देश की कला, कविता, संगीत, विज्ञान–सर्वत्र इस आध्यात्म भावना की छाप दिखाई देती है । यही कारण है कि भारत के अनेक प्राचीन कलाविद संस्कृत और नृत्य तक को भी परमतत्व की प्राप्ति का साधन मानकर उसकी साधना में प्रयत्नशील हुए ।"[4] वैसे ही वर्तमान समय में योग का महत्व समाप्त नहीं हुआ है, अपितु संपूर्ण विश्व ने उसे स्वीकारा है और आज वैश्विक स्तर पर 21 जून को योग दिवस के रूप में मनाया जाता है । यह भारत की बहुत ही बड़ी उपलब्धि है, जो प्राचीन काल से वेदो तथा ऋषि–मुनियों से प्राप्त एवं संवर्धित है । संसार सुख और भोग हेय नहीं है । उनको प्राप्त करना हर मनुष्य के लिए आवश्यक है किंतु साथ ही यह जान लेना और भी अधिक आवश्यक है, कि ऐहिलौकिक सुख ही मनुष्य का अंतिम धेय नहीं है । ऐसे विचारों ने भारत की संस्कृति में अनुपम सौंदर्य ला दिया है । शरीर, मन एवं आत्मा, इहलोक और परलोक, भौतिक सुख और आध्यात्मिक सुख सब क्षेत्रों में एक साथ उन्नति द्वारा ही मनुष्य अपनी उन्नति कर सकता है । मनुष्य जहां धर्म, अर्थ और काम को प्राप्त करके या केवल मोक्ष साधना में तत्पर होकर अपनी अंतिम उन्नति नहीं कर सकता । धर्म का अनुसरण कर अर्थ की उपलब्धि करने, धर्मानुसार 'काम' का सेवन करने और मोक्ष को अंतिम लक्ष्य बनाकर ही मनुष्य अपनी सर्वांगीण उन्नति कर सकता है ।

भारतीय संस्कृति अनेक तत्वों के सम्मिश्रण का परिणाम है । भारतीय संस्कृति द्रविड़, आर्य, बौद्ध, यवन, शक, अफगान, मुगल एवं ब्रिटिश संस्कृतियों के तत्वों के सम्मेलन का परिणाम है । यद्यपि इसकी मूल वह मुख्य धारा आर्य है, किंतु यवन, शक, मुस्लिम एवं ईसाई धाराओं ने भारतीय संस्कृति की इस मूल धारा को समृद्ध व विशाल बनाने में बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया है । सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार "समन्वय और सामंजस्य की भावना भारतीय संस्कृति की एक महत्वपूर्ण विशेषता रही है और धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र का आदर्श भारत की ऐसी सांस्कृतिक विशेषता का परिचायक है ।"[5] अतः भारतीय संस्कृति सभी धर्मों की

धरोवर है । अतः द्रविड़, आर्य, ग्रीक, शक, कुशाण, हूण, अफगान, मुगल आदि कितनी ही विविध जातियों के विचारों, विश्वासों और परंपराओं के सम्मिश्रण से विकास हुआ है । "इस देश के निवासी अन्य लोगों के विचारों व विश्वासों का सदा आदर करते रहे और उन्हें अपने में मिलाने के लिए सदा तत्पर रहें । अध्यात्म भावना के कारण जो सहिष्णुता यहाँ के लोगों में उत्पन्न हुई, उसी से यह बात संभव हो सकी ।"[6] भारत ने अपनी जिस अनुपम संस्कृति को विकसित किया उसे संसार में प्रसारित करने का कार्य भी इस देश के लोगों ने किया । भारत के निवासियों ने अपने सुदीर्घकालीन इतिहास में अपने जीवन को जिस प्रकार विकसित किया तथा धर्म, दर्शन राजनीति, ज्ञान, विज्ञान, साहित्य, संगीत एवं कला आदि के क्षेत्रों में जिस प्रकार उन्नति की है। वह इतिहास एवं संस्कृति की दृष्टि से भारतीय गौरव की बात है ।

भारत में केवल हिंदू ही नहीं अपितु मुसलमान, पारसी एवं ईसाई एक ही संस्कृति के रग–रग में रगे हुए हैं । यह संस्कृति हिंदू–मुसलमान एवं आधुनिक संस्कृतियों के सम्मेलन से बनी है । भारत के मुसलमान अपने विचारों रीति–रिवाजों एवं अभ्यास की दृष्टि से अरब एवं तुर्की मुसलमानों से बहुत ही भिन्न हैं । भारतीय मुसलमानों के पूर्वज हिंदू ही थे, फिर भी धर्म परिवर्तन के संस्कारों एवं परंपरागत विचारों में मौलिक परिवर्तन नहीं हुआ । उसी प्रकार आंध्र, तमिलनाडु, बंगाल, गुजरात आदि में विभिन्न भाषा–भाषी जो जनसमुदाय निवास करते हैं वह सब एक संस्कृति के ही हैं । राम एवं कृष्ण के आदर्श, अर्जुन एवं भीम के पराक्रम एवं नानक, तुलसी, कबीर और रहीम के उपदेश समान रूप से प्रभावित करते हैं ।

भारत की सीमाएँ प्राकृतिक दृष्टि से अत्यंत सुंदर हैं । उत्तर में हिमालय की ऊंची एवं दुर्गम पर्वत श्रृंखलाएँ हैं; तो पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम में यह देश महासमुद्र से घिरा हुआ है । इसके उत्तर–पश्चिम एवं उत्तर–पूर्वी कोनों पर समुद्र नहीं है किंतु उनकी सीमा निर्धारण करने के लिए हिमालय की पश्चिमी और पूर्वी पर्वत श्रृंखलाएँ दक्षिण की ओर मुड़ गई है और समुद्र तट तक चली गई है । भारत के निवासी गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिंधु और कावेरी इन सात नदियों को पवित्र मानते हैं । प्रकृति ने भारत को एक विशाल दुर्ग समान बनाया है; जो पर्वत श्रृंखलाओं और समुद्र से घिरा हुआ है । वासुदेव उपाध्याय के अनुसार "कालिदास के ग्रंथों में सभी बातों का वर्णन विशद रूप से पाया जाता है । अजंता की चित्रकारी संसार प्रसिद्ध है । पहाड़ी चट्टानों को काटकर अजंता की गुफाएँ बनाई गयी ।"[7] इन को देखने से तत्कालीन वेशभूषा रहन–सहन का सही पता लग जाता है चित्र में जीवन के प्रति आनंद भावना दृष्टिगोचर होती है ।

भारत के निवासियों में बहुतसंख्य आर्य जाति की संख्या है । भारत की दृष्टि से भारत में आर्य भाषाओं की बोली बोलनेवालों की संख्या भी अधिक है । उत्तर भारत की लगभग सभी भाषाएँ आर्य परिवार की है । उसमें उड़िया, हिंदी, पंजाबी, पश्तो, कश्मीरी, गुजराती, असमीया, बंगला, मराठी, सिंध, लहदा यह सब आर्य भाषाएँ ही हैं । भारत की आर्य परिवार की भाषाओं में हिंदी सबसे प्रमुख है । इसके बोलनेवालों की तादाद भारत में सर्वाधिक है । इसलिए यह वर्तमान समय में भारत की सर्वाधिक प्रयुक्त होने वाली संपर्क भाषा है । साहित्यिक उपयोग के लिए हिंदी का जो रूप प्रयुक्त होता है वह कुरु देश में बोली जाने वाली खड़ी बोली का परिष्कृत रूप है । सर्व साधारण जनता की बोलचाल में हिंदी भाषा के जो विभिन्न रूप प्रयुक्त होते हैं, उनमें खड़ीबोली, ब्रजभाषा, बांगरू, राजस्थानी, पंजाबी, बुंदेली, अवधी, छत्तीसगढ़ी, बघेली, भोजपुरी, मैथिली, मगही, कुमाऊंनी, गढ़वाली और कन्नौजी प्रमुख है । भारत के जिन प्रदेशों में आजकल आर्य परिवार की विविध भाषाएँ बोली जाती हैं; उनमें प्राचीन काल में भी आर्य भाषाएँ ही प्रचलित थी । संस्कृत, पालि, प्राकृत एवं उनके अपभ्रंश विविध समय में इन प्रदेशों में बोले जाते थे । वस्तुतः भारत की आधुनिक आर्य भाषाएँ इन प्राचीन आर्य भाषाओं से ही विकसित हुई हैं । सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार "जिन प्रदेशों में आजकल आर्य भाषाओं का चलन नहीं है, उनकी भाषाओं पर भी प्राचीन आर्य भाषा संस्कृत का गहरा प्रभाव है । उनमें संस्कृत के शब्द बहुत बड़ी संख्या में विद्यमान हैं और उन प्रदेशों के विद्वान संस्कृत का अध्ययन करना अत्यंत गौरव की बात

समझते हैं ।"[8] इसके अतिरिक्त भारत के दक्षिण में द्रविड़ लोगों की द्रविड़ भाषा बोली जाती है । वाचस्पति गैरोला के अनुसार "इस भारतीय सभ्यता और संस्कृति का इतिहास चिरंतन एवं शाश्वत मानव मूल्यों पर आधारित है, जिन्होंने एक निश्चित जीवन पद्धति का निर्माण किया और इसलिए जिनका महत्व सार्वदेशिक तथा सार्वकालिक बना रहा है ।"[9] रामायण, महाभारत, यह मनुष्य को सत्य और नैतिकता का उपदेश देते हैं । संस्कृति की यह एकता ऐसी हैं जो नस्ल भाषा आदि के भेद की अपेक्षा अधिक महत्व की है । अतः इसी के कारण भारतीय अपने को चीनी, ईरानी, अरब, अंग्रेज आदि अन्य राष्ट्रीयताओं से भिन्न समझते हैं और अपने को एक मानते हैं ।

निष्कर्षतः स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति में विविधता में एकता है । प्रादेशिक आधर पर भले ही भाषा, कला, वेशभूषा, त्योहार, रहन सहन आदि की दृष्टि से कुछ मात्रा में अलग हो, लेकिन भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि से एक है । प्राचीन काल से जो इस भूमि के मानव पर संस्कार हुए है, वह आज के समकालीन परिप्रेक्ष्य में भी दिखाई देते है । इसी कारण मुसीबत के समय में भी भारतीय लोग मानसिक रूप से डावाडोल नहीं होते वरन वह वीरों के शौर्य, सांस्कृतिक मूल्यों की जो सीख विरासत में मिली है उस राह पर चलकर वैश्विक स्तर पर भारतीय संस्कृति का गौरव बढ़ा रहे हैं । भारत में अनेकानेक जाति, धर्म के लोगनिवास करने पर भी उनमें सांस्कृतिक एकता की भावना विद्यमान है ।

संदर्भ ग्रंथ –

1. संपा. रामचंद्र वर्म्मा, मानक हिंदी कोश (पांचवा खंड), हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, प्र.सं. 1966, पृ. 243
2. सत्यकेतु विद्यालंकार, भारतीय संस्कृति का विकास, श्री. सरस्वती सदन मसूरी, प्र.सं.1979, पृ.11
3. वही, पृ. 14
4. वही, पृ. 16
5. सत्यकेतु विद्यालंकार, भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास (द्वितीय भाग), सर्वोदय साहित्य मंदिर, प्र.सं. 1953, पृ. 792
6. सत्यकेतु विद्यालंकार, भारतीय संस्कृति का विकास, श्री. सरस्वती सदन मसूरी, प्र.सं.1979, पृ.17
7. वासुदेव उपाध्याय, भारतीय गौरव, भारती – भंडार लीडर प्रेस इलाहबाद, तृ.प्र. 2007, पृ.166
8. वही, पृ. 26
9. वाचस्पति गैरोला, भारतीय संस्कृति और कला, हिंदी ग्रंथ अकादमी लखनऊ, प्र.सं.1973, पृ. 32